2.पुँसवन सँस्कार

पुँसवन सँस्कार-यह दूसरा सँस्कार है । यह सँस्कार जब गर्भ-स्थिति का ज्ञान हो जाता है तब दूसरे या तीसरे मास में किया जाता है । गर्भ की स्थिति बनी रहे, होने वाली संतान सुरक्षित रहे व पुरुष को अधिकाधिक बीर्यलाभ हो सके; इन तीन बातों को ध्यान में रखकर ही हमारे ऋषियों ने इस सँस्कार का महत्त्व दिया है । गर्भ-स्थिति का ज्ञान हो जाने पर पुरुष और स्त्री दोनों परस्पर प्रेम व सहयोगात्मक व्यवहार रखें पर संभोगात्मक दृष्टिकोण से संयम रखें तो निश्चित रूप से आने वाली संतान स्वस्थ, सुरक्षित, सुन्दर और पूर्णतायुक्त होगी । इस कारण ही ऋषि दयानन्द ने तो होने वाली संतान के जन्म होने के दो मास पर्यन्त पुरुष को ब्रह्मचारी रह संयम रखने को कहा । दूसरी संतान करने के निर्णय तक संयम रखा जाये तो सबसे अच्छा पर यह आपसी समझ और व्यवहार की बात है । इससे यह तो स्पष्ट होता ही है कि अधिकाधिक संयम से ही पुरुष को अधिकाधिक बीर्यलाभ हो सकेगा जिससे पुरुष व स्त्री दोनो अधिकाधिक स्वस्थ रह सकेंगे । इसके लिये "युक्ताहार-विहार" उचित निर्देश देकर उन्हें बाँध दिया । "युक्ताहार-विहार" कुछ खाश आहार (औषधियुक्त भोजन) और विहार (व्यवहार, शयन, भाषण, पठन, चिन्तन, उपासना आदि) का एक निर्देश है जो गर्भिणी स्त्री को वच्चे को जन्म देने तक और बाद में भी अधिकाधिक स्वस्थ व सुरक्षित रखे तथा होने वाली संतान भी सँस्कारित और श्रेष्ठ हो । पुँसवन सँस्कार की विधि को क्रमश: समझने से हमें इसका ज्ञान सही-सही हो सकेगा ।

१. हवन-यज्ञ- पुँस्वन सँस्कार के निर्देशानुसार हवन / अग्निहोत्र करते हुये आहुतियों के बीच ही एकान्त में पति द्वारा पत्नी के हृदय को स्पर्श करना लिखा है और साथ में पति को ही आदेश है कि वहाँ निर्देशित मंन्त्रों का उच्चारण भी करे । एकान्त में इसलिये कि वे दोनों प्रेम से आत्मीयता व विश्वसनीयता के पक्के साथी बनें । पति अत्यन्त प्रेम और विश्वास से मंत्रों के माध्यम से कहना चाहता है कि वह गर्भस्थ संतान की पूरी रक्षा करेगा । वह कहता है कि हमारी संतान निश्चय से "दशमास्य जायताम्" - दसवें मास में अर्थात्नौ मास पूरा करके ही हृष्ट-पुष्ट अवस्था में जन्म लेगी । अत: परस्पर संयम, प्रेम, सहयोग व सेवा का व्यवहार करने का संकल्प दोनों लेते हैं ।

२. स्त्री को नासापुट देना- बटवृक्ष के कोमल पत्ते व गिलोय दोनों का चूर्ण बनाकर स्त्री की दायीं नासिका में उसका नासापुट(सुँघाना) देना लिखा है । वस्तुत: यह एक महत्त्वपूर्ण और अत्यन्त उपयोगी औषधि-परिचय है । वटवृक्ष के कोमल पत्ते का चूर्ण एक ऐसी औषधि है जो गर्भिणी स्त्री के गर्भ के दोषों को सहजरुप से दूर करती है । वट विशेष कर व्रणहितकारी, रक्तपित्त नाशक तथा कोई भी टूटे भाग को जोड़ने में मदद करता है । इसमें गिलोय मिलने से और भी कारगर हो जाता है । गिलोय ज्वर नाशक है । यह कफ, पित्त, खाज-खुजली, अरूची, उल्टी/वमन, प्यास और जलन आदि दोषों को दूर करता है । खाये हुये सभी अन्न को यह सुपाच्य बना देता है और गर्भिणी के पेट में उत्पन्न हुये हर उपद्रव को गिलोय शान्त रखता है ।

३. पति द्वारा गर्भिणी के पेट पर हाथ रखकर मन्त्र बोलना- यह भी एक सार्थक प्रक्रिया है । यहाँ यही समझ है कि पति हाथ रखकर महसुस करता है कि गर्भस्थ कोई सामान्य वस्तु नहीं है वल्कि अमूल्य संपत्तिरूप असाधारण संतत्ति है, उसकी रक्षा करना ही हमारा धर्म है । वह गर्भस्थ संतान सूर्य-चन्द्र की तरह तेजस्वी होने वाली है । वह परमात्मा से ऐसी प्रार्थना करता है कि हर हाल में प्रभु गर्भिणी व उसकी संतान की रक्षा करे, पर प्रार्थना भी तभी सार्थक होती है जब उसकी रक्षार्थ स्वयं भी अनुकूल दिशा में ही प्रयास करें ।

नोट- वैसे चरक,सुश्रुत आदि आयुर्वैदिक ग्रन्थों में कुछ विशेष औषधियों का प्रयोग भी लिखा है, उन्हीं के आधार पर महर्षि दयानन्द ने भी प्रमाण दिया पर यह अत्यन्त संवेदनशील विषय होने के कारण हमें सावधान रहना होगा कि किसी अनुभवी वैद्य के निर्देशन में ही या उसके बारे में पूरी जानकारी हो तभी सेवन करें अथवा न लें । आधुनिक व्यवस्था के अनुसार गर्भिणी स्त्री के लियी डाक्टरी देखभाल, खान-पिन, आराम या सूक्ष्म व्यायाम आदि का व्यवहार भी उचित है जिससे समय पर स्वस्थ व सुरक्षित संतान पैदा हो सके ।

४. सँस्कार में आये अतिथियों का आदरसे विदा करना- सँस्कार का यह भी एक सामाजिक पहलु के हिसाब से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हिस्सा है । आदर देने से आदर मिलता है । आने वाली संतान पर एक-दूसरे का आदर करने का संस्कार पड़े; जीवन में सामाजिकता निभाने की कला सीखे और संसार में सबके बीच प्यार, सेवा, सहयोग व सफलता की शिक्षा पा सके, ऐसी धारणा है ।

५. युक्ताहार-विहार की प्रतिज्ञा करना-पूर्व भी इसका संकेत किया गया है । संयम से खाना आहार है और संयम से रहना विहार है । महर्षि दयानन्द ने कुछ निर्देशित औषधियों का दिग्दर्शन गर्भिणी स्त्री के लिये किया है कि वह स्त्री पतिदिन गिलोय, ब्राह्मी औषधि और सुंठी को मिलाकर दूध के साथ थोड़ी-थोड़ी खाया करे । अधिक शयन व अधिक प्रलाप/ मिथ्या भाषणादि से सर्वथा बचे, खारा-खट्टट्टा, तीखा, कड़वा, रेचक/ कसैले, हरड़े आदि न खाये । भोजन थोड़ा खाये जिससे पाचन सही हो जाये । क्रोध, द्वेष, लोभादि में न फँसे, चित्त को सदा प्रसन्न रखे- ये सब ही युक्ताहार व विहार के उपदेश हैं जो महर्षि दयानन्द ने पुँस्वन सँस्कार में गर्भिणी स्त्री को वर्त्तने के लिये किया है । सुसँस्कृत, श्रेष्ठ व स्वस्थ संतान के लिये ये अत्यन्त आवश्यक है । हमें इनका ध्यान देना सर्वथा उचित है ।